पाठ्यक्रम - ३०

३०.अ पंच परमेष्ठी के मूलगुण

तीर्थंकर अरिहन्त की अपेक्षा से अरिहन्त परमेष्ठी के ४६ मूल गुण कहे गए हैं। वे इस प्रकार हैं-

१. जन्म के दस अतिशय- १. अतिशय सुन्दर शरीर २. अत्यंत सुगंधित शरीर ३. पसीना रहित शरीर
४. मल-मूत्र रहित शरीर ५. हित-मित प्रिय वचन ६. अतुलनीय बल
७. दूध के समान सफेद खून ८. शरीर में १००८ लक्षण ९. समचतुरस्र संस्थान
१०. वज्रवृषभ नाराच संहनन।

२. केवलज्ञान के १० अतिशय-
१. भगवान के चारों ओर १००-१०० योजन तक सुभिक्ष होना २. धरती से ४ अंगुल ऊपर आकाश में गमन
३. चारों दिशाओं में चार मुख का दिखना ४. अदया का अभाव ५. उपसर्ग का अभाव
६. कवलाहार का अभाव ७. समस्त विद्याओं का स्वामीपना ८. नख-केशों की वृद्धि रुक जाना
९. आँखों की पलकों का न झपकना १०. शरीर की परछाईं नहीं पड़ना।

३. देवकृत १४ अतिशय-
१. दिव्य ध्वनि का अर्द्धमागधी भाषारूप परिणमन २. प्राणी मात्र में प्रेम का संचार होना
३. सभी दिशाओं का धूल आदि से रहित निर्मल होना ४. मेघ आदि से निर्मल आकाश
५. छहों ऋतुओं के फल-फूलों का एक ही समय में फलना-फूलना
६. पृथ्वी का दर्पण के समान निर्मल होना ७. चलते समय चरणों के नीचे स्वर्ण कमल की रचना होना
८. आकाश में सर्वत्र जय-जय घोष होना ९. मंद-मंद सुगंधित वायु का बहना
१०. आकाश से सुगंधित जल की मंद-मंद वृष्टि ११. पृथ्वी का कंकड़-कंटक रहित होना
१२. समस्त प्राणियों का आनन्दित होना १३. भगवान के आगे-आगे धर्म चक्र का प्रवर्तन होना
१४. छत्र, चंवर, कलश, झारी, ध्वजा, पंखा, स्वस्तिक और दर्पण इन आठ मंगल द्रव्यों का साथ-साथ रहना।

४. आठ महा प्रातिहार्य -
१. अशोक वृक्ष २. सिंहासन ३. भामण्डल ४. तीन छत्र
५. चँवर ६. पुष्प वृष्टि ७. दुन्दुभि बाजा ८. दिव्यध्वनि।

५. चार अनन्त चतुष्टय -
१. अनन्त ज्ञान २. अनन्त दर्शन ३. अनन्त सुख ४. अनन्त वीर्य।

सिद्ध परमेष्ठी के आठ मूलगुण होते हैं जो इस प्रकार हैं:-

१. क्षायिक ज्ञान - अनन्त पदार्थों को एक साथ जानने की शक्ति। २. क्षायिक दर्शन - अनन्त दर्शन की शक्ति।
३. क्षायिक सम्यक् - निश्चल श्रद्धा रूप अवस्था। ४. क्षायिक वीर्य- अनन्त भोगोपभोग की शक्ति।
५. अव्याबाधत्व- बाधा रहित आत्मिक सुख। ६. सूक्ष्मत्व - इन्द्रिय-गम्य स्थूलता का अभाव।
७. अगुरुलघुत्व - उच्चता एवं नीचता का अभाव । ८. अवगाहनत्व - पर्याय विशेष में रहने की परतंत्रता का अभाव।

उपवास शारीरिक भार से बचाता है, तो मौन मानसिक भार से।

आचार्य परमेष्ठी के छत्तीस मूल गुण होते हैं जो इस प्रकार हैं:-

१. पंचाचार - ज्ञानाचार, दर्शनाचार, तपाचार, वीर्याचार, चारित्राचार।

२. बारह तप - अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्त शय्याशन, कायक्लेश, प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्त, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान।

३. दस धर्म - उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम शौच, उत्तम सत्य, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य, उत्तम ब्रह्मचर्य।

४. तीन गुप्ति - मन गुप्ति, वचन गुप्ति, काय गुप्ति।

५. छह आवश्यक - समता, स्तुति, वंदना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, कायोत्सर्ग।

उपाध्याय परमेष्ठी के पच्चीस मूल गुण होते हैं जो इस प्रकार हैं :- ११ अंग एवं १४ पूर्व

११ अंग- १. आचारांग, २. सूत्रकृतांग, ३. स्थानांग, ४. समवायांग,
५.व्याख्या प्रज्ञप्ति अंग, ६. ज्ञातृधर्म कथांग ७. उपासकाध्ययनांग,
८. अन्तकृत्दशांग, ९. अनुत्तरोपपादिक दशांग, १०. प्रश्नव्याकरणांग, ११. विपाक सूत्रांग, १२. दृष्टिवाद अंग।

१४ पूर्व - १. उत्पाद पूर्व, २. अग्रायणी पूर्व, ३. वीर्यानुप्रवाद पूर्व, ४. अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व, ५. ज्ञान प्रवाद पूर्व
६. सत्य प्रवाद पूर्व, ७. आत्म प्रवाद पूर्व, ८. कर्म प्रवाद पूर्व, ९. प्रत्याख्यान पूर्व, १०. विद्यानुप्रवाद पूर्व,
११. कल्याणवाद पूर्व, १२. प्राणावाय पूर्व, १३. क्रियाविशाल पूर्व, १४. लोक बिन्दुसार पूर्व।

साधु परमेष्ठी के अट्ठाईस मूल गुण होते हैं जो इस प्रकार हैं:-

१. पाँच महाव्रत, २. पाँच समिति, ३. पाँच इन्द्रिय विजय, ४. छह आवश्यक, ५. सात विशेष गुण।

इनका वर्णन पूर्व के अध्याय में किया जा चुका है।

दुःख का कारण मेरापन

एक सेठ जी का शहर के बीचों-बीच एक बहुत बड़ा मकान था मकान बड़ा सुन्दर था, कीमती था, मालिक उसे बेचना चाहता था। एक दिन अचानक वह मकान धू-धू कर जलने लगा है। मकान मालिक ने सुना तो वह दौड़ा-दौड़ा आया और जलते हुए मकान को देखकर रोने लगा तथा कहता बुझाओ-बुझाओ।

कुछ ही देर बाद बड़ा बेटा भागता-भागता आया बोला पिता जी! मकान जलने पर आप रोते क्यों हो? इस मकान का तो सौदा हो चुका है। मैंने और छोटे भाई ने कल रात्रि में ही सौदा कर दिया, मकान बिक चुका है। मकान अब भी जल रहा है किन्तु अब जलने का दुःख नहीं, क्योंकि मकान मेरा नहीं है। कुछ समय बाद छोटा बेटा दौड़ा-दौड़ा आया और बोला मकान जल रहा है और आप दोनों खड़े-खड़े देख रहे हैं।

बड़ा भाई-छोटे भाई से अरे! तू पागल हो गया है क्या? मकान तो बिक चुका है। अरे-भाई साहब! आज ही सुबह-सुबह उन्होंने सौदा केन्सिल कर दिया है। इतना सुनना था कि वह भाई, बड़ा भाई और पिताजी भी रोने लगे।

शिक्षा - वस्तु मेरी थी, जल रही थी तो दुःख हो रहा था, वस्तु मेरी नहीं और जल रही है तो दुःख नहीं हो रहा है। मेरापन ही दुःख का कारण है, अतः सुखी होना है तो इस मेरापन को छोड़ना होगा।

० पहले, दूसरे और चौथे गुणस्थान में ही जीवों का जन्म होता है। तथा तीसरे, आठवें के प्रथम भाग, बारहवें एवं तेरहवें गुणस्थान में जीवों का मरण नहीं होता है शेष सभी गुणस्थानों में मरण हो सकता है।
० पहला, छटवाँ, सातवाँ, आठवाँ, नवमा, दसवाँ, बारहवाँ, तेरहवाँ और चौदहवाँ गुणस्थान मोक्ष जाने के लिए अनिवार्य है अर्थात् दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवाँ, ग्यारहवाँ गुणस्थान प्राप्त किये बिना भी जीव मोक्ष जा सकता है।

आप जितना कम बोलेंगे, आपकी उतनी ही अधिक सुनी जाएगी।

पाठ्यक्रम - ३०

३०.ब एक अद्भुत प्रक्रिया - समुद्घात

अपने मूल शरीर को न छोड़कर, तैजस और कार्मण शरीर के प्रदेशों सहित, आत्मा के प्रदेशों का शरीर के बाहर निकलना समुद्घात कहलाता है। समुद्घात सात प्रकार के होते हैं -१. वेदना समुद्घात, २. कषाय समुद्घात, ३. विक्रिया समुद्घात, ४. मारणान्तिक समुद्घात, ५. तैजस समुद्घात, ६. आहारक समुद्घात, ७. केवली समुद्घात।

वात, पित्तादि विकार जनित रोग या विषपान आदि की तीव्रवेदना से मूल शरीर को छोड़े बिना आत्म प्रदेशों का बाहर निकलना वेदना समुद्घात है। कषाय की तीव्रता से आत्म प्रदेशों का अपने शरीर से तिगुने प्रमाण फैलने को कषाय समुद्घात कहते हैं। जैसे-संग्राम में योद्धा लोग क्रोध में आकर लाल-लाल आँखें करके अपने शत्रुओं को देखते हैं, यह प्रत्यक्ष देखा जाता है। यही समुद्घात का रूप है।

शरीर या शरीर के अङ्ग बढ़ाने के लिए अथवा अन्य शरीर बनाने के लिए आत्मप्रदेशों का मूल शरीर को न छोड़कर बाहर निकल जाना विक्रिया समुद्घात है। विक्रिया समुद्घात देव व नारकियों के तो होता ही है, किन्तु विक्रियाऋद्धिधारी मुनीश्वरों के तथा भोगभूमियाँ जीव अथवा चक्रवर्ती आदि के भी विक्रिया समुद्घात होता है। तिर्यञ्चों में भी विक्रिया समुद्घात होता है। अग्निकायिक, वायुकायिक जीवों में भी विक्रिया समुद्घात होता है।

मरण के अन्तर्मुहूर्त पहले, मूल शरीर को न छोड़कर, जहाँ उत्पन्न होना है, उस क्षेत्र का स्पर्श करने के लिए आत्म प्रदेशों का शरीर से बाहर निकलना मारणान्तिक समुद्घात है। जैसे- सर्विस करने वालों का ट्रांसफर हो गया है तो जहाँ जाना है वहाँ पहले जाकर मकान, आफिस आदि देखकर वापस आ जाते हैं, फिर परिवार सहित सामान लेकर चले जाते हैं।

संयमी महामुनि के विशिष्ट दया उत्पन्न होने पर अथवा तीव्र क्रोध उत्पन्न होने पर उनके दाएँ अथवा बाएँ कंधे से तैजस शरीर का एक पुतला निकलता है, उसके साथ आत्मप्रदेशों का बाहर निकलना तैजस समुद्घात कहलाता है। तैजस समुद्घात दो प्रकार का होता है - शुभ तैजस समुद्घात एवं अशुभ तैजस समुद्घात। जगत् को रोग दुर्भिक्ष आदि से दु:खित देखकर जिनको दया उत्पन्न हुई है, ऐसे महामुनि के मूल शरीर को न छोड़कर दाहिने कंधे से सौम्य आकार वाला सफेद रंग का एक पुतला निकलता है, जो १२ योजन में फैले हुए दुर्भिक्ष, रोग आदि को दूर करके वापस आ जाता है। तपोनिधान महामुनि के क्रोध उत्पन्न होने पर मन में विचार की हुई विरुद्ध वस्तु को भस्म करके और फिर उस ही संयमी मुनि को भस्म करके नष्ट हो जाता है। यह मुनि के बाएँ कंधे से सिंदूर की तरह लाल रंग का बिलाव के आकार का, बारह योजन लंबा, सूच्यंगुल के संख्यात भाग प्रमाण मूल विस्तार और नौ योजन चौड़ा रहता है।

आहारक ऋद्धि वाले मुनि को जब तत्त्व सम्बन्धी तीव्र जिज्ञासा होती है, तब उस जिज्ञासा के समाधान के लिए उनके मस्तक से एक हाथ ऊँचा सफेद रंग का पुतला निकलता है, जो केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में जाकर, विनय से पूछकर अपनी जिज्ञासा शांतकर मूल शरीर में प्रविष्ट हो जाता है। यह तीर्थवंदना आदि के लिए भी जाता है।

जब केवली भगवान् की आयु अन्तर्मुहूर्त शेष रहती है एवं शेष ३ अघातिया कर्मों की स्थिति अधिक हो तो आयुकर्म के बराबर स्थिति करने के लिए आत्मप्रदेशों का दण्ड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण के माध्यम से बाहर निकलना होता है, उसे केवली समुद्घात कहते हैं। जैसे-गीली धोती (पंचा)फैला देने से जल्दी सूख जाती है एवं बिना फैलाए जल्दी नहीं सूखती है। वैसे ही आत्मप्रदेश फैलाने से कर्म कम स्थिति वाला हो जाता है, बिना फैलाए उनकी स्थिति घटती नहीं है।

केवली समुद्घात चार प्रकार से होता है-

१. दण्ड समुद्घात, २. कपाट समुद्घात, ३. प्रतर समुद्घात, ४. लोकपूरण समुद्घात

ध्यान शून्य साधना पुण्य बन्ध तो प्रबल करा सकती है परन्तु निर्वाण कराने वाली साधना तो ध्यान की है।

प्रश्नोत्तर रत्नमालिका

कोऽन्धो योऽकार्यरतः को बधिरो यः शृणोति न हितानि।
को मूको यः काले प्रियाणि वक्तुं न जानाति॥ 16॥

अर्थ : (अन्धः कः) अन्धा कौन है? **(यः)** जो **(अकार्यरतः)** अयोग्य/निद्य कार्य में लगा है। **(कः बधिरः)** बहरा कौन है? **(यः)** जो **(हितानि)** हित को **(न शृणोति)** नहीं सुनता है। **(मूकः)** गूंगा **(कः)** कौन है? **(यः)** जो **(काले)** समय पर **(प्रियाणि वक्तुम्)** प्रिय बोलना **(न जानाति)** नहीं जानता है।

किं मरणं मूर्खत्वं किं चानर्घ्यं यदवसरे दत्तम्।
आमरणात्किं शल्यं प्रच्छन्नं यत्कृतमकार्यम्॥ 17॥

अर्थ : (मरणम् किम्) मरण क्या है? **(मूर्खत्वम्)** मूर्खपना **(च)** और **(अनर्घ्यम् किम्)** बहुमूल्य क्या है? **(यदवसरे दत्तम्)** जो अवसर पर दिया जाए। **(आमरणात् किं शल्यम्)** मरण समय तक शल्य क्या है? **(यत् अकार्यम्)** जो नहीं करने योग्य कार्य **(प्रच्छन्नं कृतम्)** गुप्त रीति से किया गया हो।

कुत्र विधेयो यत्नो विद्याभ्यासे सदौषधे दाने।
अवधीरणा क्व कार्या खलपरयोषित्परधनेषु॥ 18॥

अर्थ : (यत्नः) प्रयत्न **(कुत्र)** कहाँ **(विधेयः)** करना चाहिए ? **(सदा)** हमेशा **(विद्याभ्यासे)** विद्या के अभ्यास में, **(औषधे दाने)** औषध दान में। **(अवधीरणा)** अनादर **(क्व)** कहाँ **(कार्या)** करना चाहिए? **(खल-परयोषित्-परधनेषु)** दुष्ट, परस्त्री और पर धन में।

काहर्निशमनुचिन्त्या संसारासारता न च प्रमदा।
का प्रेयसी विधेया करुणादाक्षिण्यमपि मैत्री ॥ 19॥

अर्थ : (अहर्निशम्) रात-दिन **(का)** क्या **(अनुचिन्त्या)** चिन्तन करना चाहिए ? **(संसारासारता)** संसार की असारता का **(न च प्रमदा)** स्त्री का नहीं। **(प्रेयसी विधेया का)** प्रेमिका किसे बनाना चाहिए? **(करुणादाक्षिण्यमपि)** करुणा, कुशलता और **(मैत्री)** मैत्री भाव को।

कण्ठगतैरप्यसुभिः कस्यात्मा नो समर्प्यते जातु।
मूर्खस्य विषादस्य च गर्वस्य तथा कृतघ्नस्य ॥ 20॥

अर्थ : (कण्ठगतैः असुभिः अपि) कण्ठगत प्राण होने पर भी **(आत्मा)** अपने को **(कस्य)** किसे **(जातु न)** कभी भी **(समर्प्यते)** समर्पित **(न)** नहीं करना चाहिए ? **(मूर्खस्य)** मूर्ख को **(विषादस्य च)** खेद-खिन्न पुरुष को **(गर्वस्य)** घमण्डी को **(तथा)** तथा **(कृतघ्नस्य)** कृतघ्न को।

कः पूज्यः सद्वृत्तः कमधनमाचक्षते चलितवृत्तम्।
केन जितं जगदेतत् सत्यतितिक्षावता पुंसा ॥ 21॥

अर्थ : (पूज्यः कः) पूज्य कौन है ? **(सद्वृत्तः)** सम्यक्चारित्र वाला **(अधनम् कम् आचक्षते)** निर्धन किसे कहते हैं? **(चलितवृत्तम्)** जिसका चारित्र अस्थिर है। **(केन जितम् एतत् जगत्)** यह संसार किसने जीता ? **(सत्य-तितिक्षावता पुंसा)** सत्य और सहनशील पुरुष ने।

कस्मै नमः सुरैरपि सुतरां क्रियते दया प्रधानाय।
कस्मादुद्विजितव्यं संसारारण्यतः सुधिया ॥ 22॥

अर्थ : (सुरैः अपि) देवों के द्वारा **(कस्मै)** किसके लिए **(सुतराम्)** अच्छी तरह **(नमः क्रियते)** नमस्कार किया जाता है ? **(दया प्रधानाय)** दया प्रधान पुरुष के लिए। **(सुधिया)** बुद्धिमान को **(कस्मात्)** किससे **(उद्विजितव्यम्)** भीति होना चाहिए ? **(संसार-रण्यतः)** संसाररूपी जंगल से।

कस्य वशे प्राणिगणः सत्यप्रियभाषिणो विनीतस्य।
क्व स्थातव्यं न्याय्ये पथि दृष्टादृष्टलाभाय ॥ 23॥

अर्थ : (प्राणिगणः) प्राणी **(कस्य)** किसके **(वशे)** वश में होते हैं। **(सत्य-प्रिय-भाषिणः)** सत्य और प्रिय बोलने वाले के तथा **(विनीतस्य्)** विनीत पुरुष के। **(दृष्टादृष्टलाभाय)** दृष्ट-अदृष्ट लाभ के लिए **(क्व)** कहाँ **(स्थातव्यं)** रहना चाहिए? **(न्याय्ये पथि)** न्याय पथ में।

विद्युत्विलसितचपलं किं दुर्जनं संगतं युवतयश्च।
कुलशैलनिष्प्रकम्पाः के कलिकालेऽपि सत्पुरुषाः॥ 24॥

अर्थ : (विद्युत् विलसितचपलम् किम्) बिजली के समान चंचल क्या है ? **(दुर्जनम् संगतम्)** दुर्जन के साथ मैत्री **(च)** तथा **(युवतयः)** स्त्रियाँ हैं। **(कलिकाले अपि)** कलिकाल में भी **(कुलशैल-निष्प्रकम्पाः के)** कुलाचल पर्वत के समान निश्चल कौन है ? **(सत्पुरुषाः)** सज्जन पुरुष हैं।

किं शौच्यं कार्पण्यं सति विभवे किं प्रशस्यमौदार्यम्।
तनुतरवित्तस्य तथा प्रभविष्णोर्यत्सहिष्णुत्वम्॥ 25॥

अर्थ : (किं शौच्यम्) शोचनीय क्या है ? **(कार्पण्यम्)** कृपणता **(सति विभवे किं प्रशस्य)** वैभव होने पर भी क्या प्रशंसनीय है? **(औदार्यम्)** उदारता **(तनुतरवित्तस्य)** निर्धन को भी क्या प्रशंसनीय है? **(तथा)** वही उदारता **(प्रभविष्णोः)** समर्थ पुरुष को क्या प्रशंसनीय है ? **(यत् सहिष्णुत्वम्)** जो सहनशीलता है।

चिन्तामणिरिव दुर्लभ-मिह ननुकथयामि चतुर्भद्रम्।
किं तद्वदन्ति भूयो विधूत तमसो विशेषेण ॥ 26॥
दानं प्रियवाक्यसहितं ज्ञानमगर्वं क्षमान्वितं शौर्यम्।
त्यागसहितं च वित्तं दुर्लभमेतच्चतुर्भद्रम्॥ 27॥

अर्थ : (चिन्तामणिः इव दुर्लभम्) चिन्तामणि रत्न के समान दुर्लभ **(इह)** इस संसार में **(किम्)** क्या है ? प्रिय वचनों के साथ दान देना, घमण्ड रहित ज्ञान का होना, क्षमा सहित शूरवीर का एवं त्याग करने की भावना सहित धन का होना। निश्चय से चार भद्र हैं।

इति कण्ठगता विमला प्रश्नोत्तर रत्नमालिका येषाम्।
ते मुक्ताभरणा अपि विभान्ति विद्वत्समाजेषु ॥ 28॥
विवेकात् त्यक्तराज्येन राज्ञेयं रत्नमालिका।
रचिताऽमोघवर्षेण सुधियां सदलंकृतिः॥ 29॥

अर्थ : (इति) इस प्रकार **(येषाम्)** जिन व्यक्तियों को **(विमला)** यह निर्मल **(प्रश्नोत्तर-रत्नमालिका)** प्रश्नोत्तर रत्नमाला **(कण्ठगता)** कण्ठगत हो जाती है **(ते)** वे लोग **(मुक्ताभरणाः अपि)** आभरण से रहित होते हुए भी **(विद्वत्समाजेषु)** विद्वानों की सभा में **(विभान्ति)** सुशोभित होते हैं। **(विवेकात्)** विवेक से **(त्यक्त राज्येन)** जिन्होंने राज्य छोड़ दिया है **(राज्ञा)** उस राजा **(अमोघवर्षेण)** अमोघवर्ष के द्वारा **(सुधियाम्)** बुद्धिमानों के लिए **(सत् अलंकृतिः)** उत्तम आभूषण रूप **(इयम्)** यह कृति **(रचिता)** रची है।

आचार्य वंदना

लघु सिद्धभक्ति

नमोऽस्तु पौर्वाह्निक (अपराह्निक) आचार्य वंदना क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव समेतं श्रीसिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

अर्थ : हे आचार्य देव! **(नमोऽस्तु)** नमस्कार हो **(पौर्वाह्निक)** प्रातःकालीन **(अपराह्निक)** सायंकालीन **(आचार्य-वन्दना-क्रियायां)** आचार्य वन्दना की क्रिया में **(पूर्वाचार्यानुक्रमेण)** पूर्व आचार्यों के क्रम के अनुसार **(सकल-कर्म-क्षयार्थं)** सम्पूर्ण कर्मों का नाश करने के लिए **(भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं)** भावपूजा, वन्दना, स्तवन सहित **(श्री सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं)** श्री सिद्धभक्ति के कायोत्सर्ग को **(अहम्)** मैं **(करोमि)** करता हूँ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र)

सम्मत्तणाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं।
अगुरुलहुमव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥१॥

अर्थ : (सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं) क्षायिकसम्यक्त्व, अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतवीर्य, सूक्ष्मत्व **(अवगहणं)** अवगाहनत्व **(अगुरुलहुं)** अगुरुलघुत्व **(तहा)** और **(अव्वावाहं)** अव्याबाधत्व सुख ये **(अट्ठगुणा)** आठ गुण **(एव)** नियम से **(सिद्धाणं)** सिद्धों के **(होंति)** होते हैं।

तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि॥२॥

अर्थ : (तव-सिद्धे) तप की प्रधानता से सिद्ध **(णय-सिद्धे)** नय की प्रधानता से सिद्ध **(संजम-सिद्धे)** संयम की प्रधानता से सिद्ध **(चरित्त-सिद्धे)** चारित्र की प्रधानता से सिद्ध **(णाणम्मि)** ज्ञान की प्रधानता में **(य)** और **(दंसणम्मि)** दर्शन की प्रधानता से सिद्ध ऐसे **(सिद्धे)** सभी सिद्धों को **(सिरसा)** मस्तक से **(णमस्सामि)** मैं नमस्कार करता हूँ।

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति-काउस्सगो कओ तस्सालोचेउंसम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठ-गुणसंपण्णाणं, उड्ढलोयमत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि,वंदामि,णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं ।

अर्थ : (भंते!) हे भगवन्! **(सिद्ध-भत्ति-काउस्सग्गो कओ)** मैंने जो सिद्धभक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया **(तस्स)** उसके दोषों की **(आलोचेउं)** आलोचना करने की **(इच्छामि)** इच्छा करता हूँ **(सम्पणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित-जुत्ताणं)** जो सिद्ध भगवान् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र से युक्त **(अट्ठविह-कम्म-विप्प-मुक्काणं)** आठों प्रकार के कर्मों से सर्वथा रहित **(अट्ठगुण-संपण्णाणं)** सम्यक्त्वादि आठ गुणों से सम्पन्न/सहित **(उड्ढलोय-मत्थयम्मि)** ऊर्ध्वलोक के मस्तक पर (पइट्ठियाणं) स्वभाव में विराजमान **(तव-सिद्धाणं)** तप की अपेक्षा से सिद्ध **(णय-सिद्धाणं)** नयों की अपेक्षा से सिद्ध **(संजम-सिद्धाणं)** संयम की अपेक्षा से सिद्ध **(चरित्त-सिद्धाणं)** चारित्र की अपेक्षा से सिद्ध **(अतीदा-णागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं)** भूत भविष्यत् और वर्तमान इन तीनों कालों में सिद्ध **(सव्वसिद्धाणं)** सभी सिद्धों की मैं **(सया)** हमेशा **(णिच्च-कालं)** नियमित/निश्चित काल **(अंचेमि)** अर्चना करता हूँ **(पुज्जेमि)** पूजा करता हूँ **(वंदामि)** वंदना करता हूँ **(णमस्सामि)** नमस्कार करता हूँ **(दुक्खक्खओ)** दुःखों का नाश **(कम्मक्खओ)** कर्मों का क्षय **(बोहिलाहो)** रत्नत्रय की प्राप्ति **(सुगइ-गमणं)** श्रेष्ठगति में गमन **(समाहिमरणं)** समाधिमरण और **(जिणगुण-संपत्ति)** जिनेन्द्र भगवान् के गुणों की प्राप्ति **(मज्झं)** मुझे **(होउ)** हो।

लघु श्रुतभक्ति

नमोऽस्तु पौर्वाह्निक (अपराह्निक) आचार्य वंदना क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव समेतं श्रीश्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

अर्थ : हे आचार्य देव! (**नमोऽस्तु**) नमस्कार हो (**पौर्वाह्निक**) प्रात:कालीन (**अपराह्निक**) सायंकालीन (**आचार्य-वन्दना-क्रियायां**) आचार्य वन्दना की क्रिया में (**पूर्वाचार्यानुक्रमेण**) पूर्व आचार्यों के क्रम के अनुसार (**सकल-कर्म-क्षयार्थं**) सम्पूर्ण कर्मों का नाश करने के लिए (**भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं**) भावपूजा, वन्दना, स्तवन सहित (**श्री श्रुतभक्ति-कायोत्सर्गं**) श्री श्रुतभक्ति के कायोत्सर्ग को (**अहम्**) मैं (**करोमि**) करता हूँ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र)

कोटीशतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्त्रसंख्यमेतच्छ्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥

अर्थ : (**कोटिशतं**) सौ करोड़ (**च**) और (**द्वादश कोट्यः एव**) बारह करोड़ अर्थात् एक सौ बारह करोड़ (**त्र्यधिकानि अशीतिः लक्षानि एव**) तीन अधिक अस्सी लाख अर्थात् तेरासी लाख (**अष्टौ पंचाशत्**) आठ और पचास/अट्ठावन (**सहस्त्र-संख्यम्**) हजार संख्या वाले (**च**) और (**पंच-पदम्**) पाँच पद प्रमाण (**एतत्**) इस (**श्रुतम्**) श्रुत को (**नमामि**) मैं नमस्कार करता हूँ।

अरहंत-भासियत्थं, गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाण-महोवहिं सिरसा ॥२॥

अर्थ : (**अरहंत-भासियत्थं**) अरिहंत देव द्वारा कहे गए अर्थ/भाव रूप और (**गणहर देवेहिं**) गणधर देव द्वारा (**सम्मं गंथियं**) अच्छी तरह से गूँथे/रचे गए ग्रंथ/द्रव्य रूप (**सुदणाण महोवहिं**) श्रुत ज्ञान रूपी महासागर को (**भत्तिजुत्तो**) भक्तिपूर्वक (**सिरसा**) मस्तक से (**पणमामि**) मैं प्रणाम करता हूँ।

इच्छामि भंते! सुदभत्ति-काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अंचेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अर्थ : (भंते!) हे भगवन्! (**सुद-भत्ति-काउस्सग्गो कओ**) मैंने जो श्रुतभक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया (**तस्म**) उसके दोषों की (**आलोचेउं**) आलोचना करने की (**इच्छामि**) इच्छा करता हूँ (**अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्मसुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया**) श्रुतज्ञान के जो बारह अंग अनेक उपांग, प्रकीर्णक, प्राभृत, परिकर्मसूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत चूलिकाएँ (**च**) और (**सुत्तत्थय-थुइ-धम्मकहाइयं**) सूत्रों के अर्थ वाले स्तुतियाँ और धर्मकथा आदि रूप (**सुदं**) श्रुत है उनकी मैं (**सया**) हमेशा (**णिच्च-कालं**) नियमित/निश्चित काल (**अंचेमि**) अर्चना करता हूँ (**पुज्जेमि**) पूजा करता हूँ (**वंदामि**) वंदना करता हूँ (**णमस्सामि**) नमस्कार करता हूँ (**दुक्खक्खओ**) दु:खों का नाश (**कम्मक्खओ**) कर्मों का क्षय (**बोहिलाहो**) रत्नत्रय की प्राप्ति (**सुगइ-गमणं**) श्रेष्ठगति में गमन (**समाहिमरणं**) समाधिमरण और (**जिणगुण-संपत्ति**) जिनेन्द्र भगवान् के गुणों की प्राप्ति (**मज्झं**) मुझे (**होउ**) हो।

लघु आचार्यभक्ति

नमोऽस्तु पौर्वाह्निक (अपराह्निक) आचार्य वंदना क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव समेतं श्रीआचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

अर्थ : हे आचार्य देव! (**नमोऽस्तु**) नमस्कार हो (**पौर्वाह्निक**) प्रात:कालीन (**अपराह्निक**) सायंकालीन (**आचार्य-वन्दना-क्रियायां**) आचार्य वन्दना की क्रिया में (**पूर्वाचार्यानुक्रमेण**) पूर्व आचार्यों के क्रम के अनुसार (**सकल-कर्म-क्षयार्थं**) सम्पूर्ण कर्मों का नाश करने के लिए (**भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं**) भावपूजा, वन्दना, स्तवन सहित (**श्री आचार्यभक्ति-कायोत्सर्गं**) श्री आचार्यभक्ति के कायोत्सर्ग को (**अहम्**) मैं (**करोमि**) करता हूँ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र)

श्रुतजलधिपारगेभ्यः स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः-
सुचरिततपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥

अर्थ : जो (**श्रुतजलधि-पारगेभ्यः**) श्रुतज्ञानरूपी समुद्र के पारगामी (**स्व-पर-मत-विभावना-पटुमतिभ्यः**) स्वमत और परमत के विशेष विचार करने में कुशल (**सुचरित-तपोनिधिभ्यो**) सम्यक्चारित्र और तप के खजाने (**गुण-गुरुभ्यः**) गुणों में महान् ऐसे (**गुरुभ्यो नमः**) गुरुओं के लिए नमस्कार हो।

छत्तीस-गुण-समग्गे, पंचविहाचारकरण-संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिये सया वन्दे ॥२॥

अर्थ : जो (**छत्तीस-गुण-समग्ग**) छत्तीस गुणों से परिपूर्ण (**पंच-विहाचार-करण-संदरिसे**) पाँच प्रकार के आचार और क्रियाओं के पालक/संदर्शक/उपदेशक (**सिस्साणुग्गह-कुसले**) शिष्यों के उपकार करने में चतुर ऐसे (**धम्माइरिये**) धर्माचार्य की मैं (**सदा**) सदा (**वंदे**) वंदना करता हूँ।

गुरुभत्ति-संजमेण य, तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठकम्मं, जम्मणमरणं ण पावेंति ॥३॥

अर्थ : (**गुरु-भत्ति-संजमेण**) गुरुभक्ति में मन की एकाग्रता से (**घोरं**) भयंकर (**संसार-सायरं**) संसाररूपी सागर को (**तरन्ति**) तैरते हैं (**अट्ठकम्मं**) आठ कर्मों को (**छिण्णंति**)

छेदते हैं (**च**) और (**जम्मण-मरणं**) जन्म-मरण को (**ण पावेंति**) नहीं पाते।

ये नित्यं व्रत-मन्त्रहोम-निरता, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः,
षट्कर्माभिरतास्तपोधनधनाः साधुक्रियाः साधवः ।।४।।

अर्थ : (**ये**) जो (**नित्यं**) प्रतिदिन (**व्रत-मंत्र-होम-निरताः**) व्रतरूपी मंत्र वाले हवन में लीन (**ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः**) ध्यानरूपी अग्नि में कर्मरूपी हव्य/साकल्य से व्याप्त अर्थात् ध्यानरूपी अग्नि में यज्ञ करने वाले (**षट्कर्माभिरताः**) सामायिक आदि छः आवश्यक कर्मों में लीन (**तपोधन-धनाः**) तपरूप धन वाले (**साधु-क्रियाः**) साधुओं की क्रियाओं को करने वाले (**साधवः**) साधुगण आचार्य परमेष्ठी होते हैं।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिकाः,
मोक्षद्वारकपाट-पाटनभटाः, प्रीणन्तु मां साधवः ।।५ ।।

अर्थ : (**शील-प्रावरणाः**) अठारह हजार शीलरूपी वस्त्रों के धारक (**गुण-प्रहरणाः**) चौरासी लाख उत्तरगुणरूपी अस्त्र-शस्त्र वाले (**चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः**) चन्द्र और सूर्य से भी अधिक तेज वाले (**मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः**) मोक्षरूपी महल के द्वारों के दरवाजों को खोलने में सुभट/योद्धा ऐसे (**साधवः**) साधु/साधक आचार्य परमेष्ठी (**मां**) मुझको (**प्रीणंतु**) प्रसन्न/संतुष्ट करें।

गुरवः पान्तु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णवगम्भीराः मोक्षमार्गोपदेशकाः ।।६ ।।

अर्थ : जो (**ज्ञान-दर्शन-नायकाः**) ज्ञान और दर्शन के स्वामी (**चारित्रार्णव-गम्भीरा**) चारित्र में सागर के समान गंभीर और (**मोक्ष-मार्गोपदेशकः**) मोक्षमार्ग का उपदेश देने वाले ऐसे (**गुरवः**) दीक्षा दायक गुरु आचार्यदेव (**नः**) हमारी (**नित्यं**) हमेशा (**पान्तु**) रक्षा करें।

इच्छामि भंते! आइरियभत्ति-काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयण गुणपालण-रयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पुज्जेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अर्थ : (भंते!) हे भगवन्! (**आइरियभत्तिकाउस्सग्गो कओ**) मैंने जो आचार्यभक्ति सम्बन्धी कायोत्सर्ग किया (**तस्स**) उसके दोषों की (**आलोचेउं**) आलोचना करने की (**इच्छामि**) इच्छा करता हूँ (**सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित-जुत्ताणं**) जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र से युक्त (**पंचविहाचाराणं**) पाँच प्रकार के आचारों वाले (**आयरियाणं**) आचार्य परमेष्ठी को (**आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं**) आचारांग आदि श्रुतज्ञान का उपदेश देने वाले (**ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं**) रत्नत्रयरूप गुणों के पालन करने में लीन (**सव्व साहूणं**) सभी साधु परमेष्ठियों की मैं (**सया**) हमेशा (**णिच्च-कालं**) नियमित/निश्चित काल (**अंचेमि**) अर्चना करता हूँ (**पुज्जेमि**) पूजा करता हूँ (**वंदामि**) वंदना करता हूँ (**णमस्सामि**) नमस्कार करता हूँ (**दुक्खक्खओ**) दुःखों का नाश (**कम्मक्खओ**) कर्मों का क्षय (**बोहिलाहो**) रत्नत्रय की प्राप्ति (**सुगइ-गमणं**) श्रेष्ठगति में गमन (**समाहिमरणं**) समाधिमरण और (**जिणगुण-संपत्ति**) जिनेन्द्र भगवान् के गुणों की प्राप्ति (**मज्झं**) मुझे (**होउ**) हो।

.....

मोह का कार्य

व्यक्ति जिस कार्य को करने में निष्णात होता है वह उस कार्य में सफल हो जाता है, लेकिन वह यदि किसी कार्य को करने में अनभिज्ञ है और उस कार्य को करता है तो असफल हो जाता है। जैसे कोई पुरुष दुकान के कार्य में होशियार है और महिला गृहकार्य में दक्ष है लेकिन महिला दुकान का कार्य करे और पुरुष घर का कार्य तो ठीक नहीं हो सकता। क्योंकि जो जिसका कार्य है उसको ही शोभा देता है।

जैसे एक धोबी था। उसके यहाँ एक गधा व एक श्वान था। गर्दभ इसलिए कि वह अपनी पीठ पर कपड़े लादकर घाट तक ले जाता और धुले हुए कपड़े वापस घर ले आता था और श्वान का कार्य था चोरों से घर की सुरक्षा करना। वह रात को पहरा देता था।

लेकिन मालिक ने कई दिन से श्वान को भरपेट भोजन नहीं दिया था अतः वह कमजोर हो गया था। और रात को जब चोर धोबी के घर में प्रवेश करते हैं तो श्वान की शक्ति क्षीण हो जाने से वह भौंकता नहीं है। तो गधा कहता है कि देखो। चोर मालिक के घर में प्रवेश कर रहे हैं तू भौंकता क्यों नहीं? तब श्वान कहता है कि मालिक मुझे रोटी खाने को नहीं देता अतः मुझमें भौंकने की शक्ति नहीं, मैं तो नहीं भौंकूँगा चाहे जो हो। तब गधे ने सोचा कि मैं भौंकूँ और उसने जैसे ही भौंकना शुरू किया कि मालिक की नींद लगी-लगी थी। खुल गई तो उसे गधे पर बहुत गुस्सा आया और डंडे से गधे को पीटने लगा। अतः गधे ने श्वान का कार्य किया इसलिए उसे डंडे खाने पड़े।

ठीक इसी प्रकार आत्मा का कार्य है अपने ज्ञानस्वरूप में रहना पर ये कार्य न करके मोह का कार्य करता है कि ये अच्छा है ये बुरा है, ये अनुकूल है ये प्रतिकूल है, तो इसे चतुर्गति के डंडे पड़ते हैं। अतः मोह का कार्य भौंकना है। उसके कार्य को छोड़ो और जो अपना कार्य ज्ञाता दृष्टापने का है उसको करोगे तो फिर दुःखों को सहन नहीं करना पड़ेगा।

अभ्यास

अ. प्रश्नों के उत्तर लिखें :-

१. सूर्य और चन्द्रमा क्या और कैसे हैं?
२. ढाई द्वीप में कहाँ, कितने सूर्य, चन्द्रमा हैं?
३. सल्लेखना किसे कहते हैं? क्यों ली जाती है?
४. वीतराग सम्यक्त्व कब होता है? उदाहरण बताएं।
५. भामाशाह ने राणाप्रताप को कितना धन दिया?
६. मूलाचार ग्रन्थ के १२ अधिकार कौन से हैं?
७. मदिरा सेवन से क्या हानि है?
८. नवनीत अभक्ष्य क्यों है?
९. शय्या परीषह जय किसे कहते हैं?
१०. लुटेरे और बैरी कौन हैं?
११. नरक और जड़ता क्या है?
१२. चार मूर्ख क्यों और कैसे पीटे गए?
१३. आठ मंगल द्रव्य कौन से हैं?
१४. शोचनीय और प्रशंसनीय क्या है?
१५. चिन्तामणि के समान दुर्लभ क्या है?
१६. समुद्घात किसे कहते हैं? वे कितने होते हैं?

ब. छंद व श्लोक को पूरा करें।

१. वश ..... धाम।
२. नाम ..... भगवान।
३. है अज्ञान ..... कर दो।
४. विषय ..... अज्ञान।
५. पातुं ..... नाय।।
६. नलिनी ..... एव।।
७. कोऽन्धो ..... जानाति।
८. अरहन्त ..... सिरसा।

स. श्लोक के अर्थ लिखो-

१. प्रश्नोत्तर रत्नमालिका श्लोक नं. ४, १३, १८, २५
आचार्य भक्ति श्लोक - ३, ६

द. हाँ या ना में उत्तर दें-

१. आकाश में दिखने वाला सूर्य देव है।
२. सूर्य-चन्द्रमा असंख्यात हैं।
३. प्राकृत भाषा के ही ग्रन्थ श्रेष्ठ होते हैं।
४. मूलाचार ग्रन्थ में २८ मूलगुणों का वर्णन है।
५. रत्नकरण्ड श्रावकाचार दो सौ वर्ष पूर्व लिखा गया।
६. नवनीत से प्राप्त घी खाने योग्य नहीं है।
७. होटल की बनी वस्तुएं सर्वथा अभक्ष्य हैं।
८. वर्षाकाल में पिसे आटे की मर्यादा पांच दिन है।
९. छह ऋतुओं के फल लगना जन्म का अतिशय है।
१०. मारणान्तिक समुद्घात मुनियों के ही होता है।

अन्यत्र ग्रंथ से खोजें, ज्ञान बढ़ाएँ पढ़ें और पढ़ाएँ।

१. दिन और रात कैसे होते हैं?
२. अमावस्या और पूर्णिमा कैसे होते हैं?
३. सूर्य ग्रहण और चन्द्रग्रहण कब होते हैं?
४. मुनिराज एक साथ कितने परीषह हो सकते हैं? क्यों?
५. द्वादशांग में किन विषयों का वर्णन है?
६. आचार्य परमेष्ठी विद्यासागर जी का जीवन परिचय एवं व्यक्तित्व-कृतित्व पर लेख लिखिए।
७. किन्हीं दस प्राचीन आचार्यों का जीवन परिचय एवं उनके द्वारा रचित ग्रंथों के नाम लिखिए।

जरा सोच लो समझ लो

जरा सोच लो समझ लो भैया, ये संयम सुमेरु का भार है।
इन कठिन व्रतों का पालना, बच्चों का नहीं खिलवाड़ है॥
सर्दी और गर्मी के कारण कष्ट सामने आएँगे,
कहीं पैर में छाले होंगे कहीं पैर छिल जाएँगे।
साधु पाने में कष्ट अपार है, कहो आत्मा तुम्हारी तैयार है,
इन कठिन.... ॥ १ ॥
कोस हजारों पैदल चलना, हाथों से लोचन करना,
लेने को निर्दोष आहार ग्राम-ग्राम घर-घर फिरना।
साधु पने में कष्ट अपार है, कहो आत्मा तुम्हारी तैयार है,
इन कठिन.... ॥ २ ॥
कहीं-कहीं सत्कार मिलेगा, कहीं लोग गाली देंगे,
जैन मुनिव्रत बड़ा कठिन है, हर तरह लोग तौलेंगे।
साधु बनने में कष्ट अपार है, कहो आत्मा तुम्हारी तैयार है,
इन कठिन.... ॥ ३ ॥
जो भी नर ये व्रत पालेंगे, मोक्ष पुरी में जाएँगे,
अष्ट कर्म का नाश भी होगा, सिद्ध अवस्था पाएँगे।
तप साधन का यही अवतार है, कहो आत्मा तुम्हारी तैयार है,
इन कठिन व्रतों का पालना, वीरो-के लिए खिलवाड़ है॥ ४ ॥